# श्रीगणेश-तत्त्व-प्रश्नोत्तरी

ब्रह्मर्षि विश्वात्मा बाबा

# श्रीगणेश-तत्त्व-प्रश्नोत्तरी

ब्रह्मर्षि विश्वात्मा बावरा

दिव्यालोक प्रकाशन
ब्रह्मर्षि आश्रम, विराट नगर,
पिंजौर, हरियाणा
फोन - 01733-266170

प्रकाशक :
दिव्यालोक प्रकाशन
ब्रह्मर्षि आश्रम,
विराट नगर, पिंजौर (हरियाणा)
फोन : 01733-266170

© लेखकाधीन

सम्पादन :- ब्रह्मऋता परिव्राजिका

शब्द संयोजन :- *अमित शर्मा*

प्रथम संस्करण :- 3 फरवरी 2005 माघ कृष्णा
नवमी संम्वत् २०६१

प्रतियाँ :- 2100

मूल्य :- 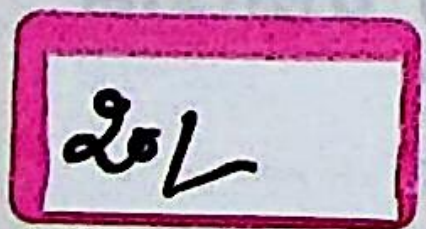


मुद्रक :-दी प्रैस, नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032

# दो शब्द

यह लघु पुस्तिका पाठकों के ज्ञानवर्धन के लिए प्रकाशित की जा रही है। वर्तमान में कई ऐसे प्रश्न हैं जिनकी जानकारी युवा पीढ़ी चाहती हैं परन्तु समुचित समाधान न होने से अपने धर्म से ही विमुख होती जा रही है। उन अनेक शकाओं में प्रथम पूजनीय श्रीगणेश भगवान् हैं जिनके विचित्र स्वरूप को देखकर हम उनके रहस्य को जानने की अपेक्षा उपहास में ही आनन्द लेते हैं। यह पीढ़ा और चिन्ता परम पूज्य गुरुदेव को प्राय: सताया करती थी इसलिए जब भी कभी उनसे ऐसे प्रश्न होते तो उनका समाधान तुरन्त करते थे। ऐसे ही यह प्रश्न हालैण्ड में लोगों ने उनसे पूछे, जिनकी उपयोगिता देखते हुए मैंने भी अपने पाठकों को इससे अवगत कराने का प्रयास किया है। इस लघु पुस्तिका में भगवान गणेश से सम्बन्धित जो प्रश्न है, उनको ध्यान से पढ़िये, इससे आपको अपने ग्रन्थों के रहस्यात्मक पहलु का बोध होगा। ऋषियों ने गुह्यतम रहस्यों को आकृति के माध्यम से समझाने का प्रयास किया है। भगवान् गणेश के स्वरूप का प्रत्येक पहलु एक महान् अर्थ अपने में सजोय हुआ है, उसकी व्याख्या पूज्य गुरुदेव के

विचारों से आप समझ जायेंगे।

दूसरा प्रश्न गुरुदेव ने रखा है "मूल्यवान् क्या ?" एक रोचक कहानी के माध्यम से जीवन के मूल्यवान् तत्त्व का दर्शन आपको होगा। सही में जो मूल्यवान् तत्त्व है उसके लिए प्रयत्न न कर मनुष्य ककर –पत्थर ही बटोरता रह जाता है जिसका उसके जीवन में कोई मूल्य नहीं। इस लघु लेख को पढ़िये और विचार कीजिए मूल्यवान् क्या है?

विश्वास है पाठक इन लेखों से लाभान्वित होंगे और जीवन पर विचार करने की दिशा प्राप्त होगी। पूज्यश्री के श्रीचरणों में उनकी जयन्ती पर बार–बार प्रणाम करते हुए उनके आशीर्वाद की अभीप्सु –

ब्रह्मऋता परिव्राजिका

30–1–2005 प्रचारिका–इंटरनैशनल ब्रह्मर्षि मिशन

**प्रश्नकर्ता** – स्वामी जी! कल गणेश चतुर्थी है अतः आज आप इस व्रत की महिमा और श्रीगणेश पूजा के बारे में हमें कुछ बताएँ।

**गुरुजी** – गणेश चतुर्थी का व्रत हमारे यहाँ पुराणों में पुत्र प्राप्ति की अभिलाषा से, विद्याप्राप्ति की अभिलाषा से और सम्पत्तिप्राप्ति की अभिलाषा से करने की व्यवस्था दी गई है। पुराणों की ऐसी मान्यता है कि भगवान् शंकर की प्रार्थना पर उनको वरदान देते हुए श्रीमन्नारायण स्वयं गणपति के रूप में अवतरित होते हैं। इस पावन चतुर्थी के दिवस पर भगवान शंकर और भगवती पार्वती की आराधना से प्रसन्न हो करके प्रभु का गणेश रूप में अवतरित होना अपने आप में एक वरदान है और भविष्य मे जो भी कोई प्रभु की आराधना करते हुए उनसे सुयोग्य सन्तान की कामना करता है उसके लिए प्रभु करुणा करके, कृपा करके उसकी अभीप्सा पूर्ण करते हैं इसलिए इस चतुर्थी व्रत को गणेश चतुर्थी व्रत कहते हैं। यह भगवान् गणपति के अवतरण का शुभ दिन है।

**प्रश्न कर्ता** – आप ने अभी कहा कि इस व्रत को करने से सन्तान की प्राप्ति होती है। क्या इस व्रत को करने से कई और भी लाभ है?

**गुरुजी** – जैसा कि मैंने आप को बताया गणपति गणेश की उपासना में त्रिविध तत्त्वो की प्राप्ति की व्यवस्था है। सन्तति, सम्पत्ति और सुबुद्धि क्योंकि भगवान् गणपति इन तीनो के अधिपति देवता माने जाते हैं इसलिए जो भी कोई व्यक्ति बुद्धि प्राप्ति के लिए, सम्पत्ति की प्राप्ति के लिए और सन्तान की प्राप्ति के लिए गणपति की उपासना करता है, उसकी अभीप्सा पूर्ण होती है, ऐसा शास्त्रकारो का कथन है।

**प्रश्न कर्ता** – स्वामी जी, अब हमारे श्रोतागण यह जानना चाहते हैं कि इस व्रत को करने का क्या विधान है, इसको कैसे किया जाए?

**गुरुजी** – विधान तो प्रत्येक व्रत में संयम नियम का होता है। एक दिन पहले अर्थात् तृतीया के दिन एक अन्न का सेवन करे कोई अपवित्र वस्तु का सेवन न करे। भगवान् गणेश का चिन्तन करते हुए रात्रि शयन करे। प्रातःकाल उठकर नित्य क्रिया से निवृत्त होकर के भगवान् गणपति का पूजन करे

या किसी मन्दिर में जाकर पूजन करे, गणपति की प्रतिमा का समर्चन करे या अपने घर ही में गणेश की प्रतिमा के समक्ष, चित्र के समक्ष या गणेश की प्रतिमा की कल्पना करके उसके समक्ष भगवान् गणपति की पूजा करे। गणपति का जप और विशेष रूप से गणपति के ध्यान के साथ उनके चरित्रों का गायन करते हुए दिन में और रात्रि में भी उसी प्रकार से उनकी समर्चना करे। पञ्चमी की प्रात तक भगवान् गणपति का चिन्तन करते हुए व्रत का पारण करे, ऐसा विधान है शास्त्रों में। यहा पर ब्राह्मण भोजन आदि की व्यवस्था तो हो नहीं सकती और न इस प्रकार से सब के लिए गणपति का मन्दिर ही सुलभ है। अपने घर में ही गणेश के चित्र के सामने उनकी पूजा, आराधना करते हुए उनका चिन्तन करें और उसका लाभ प्राप्त करें। विशेष करके हमारे यहां महाराष्ट्र में गणेश चतुर्थी बहुत विशाल रूप में मनाई जाती है। उसमें बहुत दिन पूर्व से ही भगवान् गणपति के स्वरूप का सृजन होता है। फिर उनकी पूजा होती है, फिर उनकी सवारी निकाली जाती है और उस सवारी को लेकर बहुत बड़ी विशाल शोभा यात्रा के रूप में लाखों की तादात में बड़े–बड़े शहरों में नर–नारी, अबला–वृद्ध

भगवान् गणपति का चिन्तन करते हुए उस प्रतिमा को ले जा कर के जल में विसर्जित करते हैं। जैसे बंगाल में दुर्गा पूजा प्रचलित है ऐसे ही महाराष्ट्र में गणपति पूजा प्रचलित है।

हमारे यहां शास्त्रों में एक बात समझाई गई है कि पञ्चदेव उपासक जो है वह कभी भी नरक का दर्शन नहीं करता और न तो कभी नरक की यातनाओं का पात्र बनता है। पञ्चदेव उपासना में भगवान् विष्णु, भगवान् शिव, भवगती शक्ति दुर्गा, सूर्य तथा गणपति, ये पांचों देवता स्वीकार किए गए हैं। मेरे सिद्धान्तानुसार ये पांचों देव उस ब्रह्म के पाच तत्त्वों की अभिव्यक्तियां हैं। जैसा कि आप जानते हैं कि किसी भी व्यक्तित्व को समझने के लिए उसके पांच अवयवों–नाम, रूप, ज्ञान, शक्ति और प्रेम का ज्ञान होना आवश्यक होता है। इन पांचो के द्वारा ही उस व्यक्ति के पूर्ण व्यक्तित्व का बोध होता है।

हमारे यहां सनातन धर्म में परमात्मा को निराकार और साकार दोनों रूपों में स्वीकार किया गया है। जब वह निराकार परमात्मा साकार विराट् पुरुष के रूप में अभिव्यक्त होता है,तब उसके ये पांच अवयव स्वीकार किए जाते हैं क्योंकि वह साकार होते हुए भी निराकार साकार है। साकार

होते हुए उसका कोई एक रूप नहीं है जिसके बारे में यह कह दिया जाए कि यही परमात्मा है। विराट् तो विभिन्न रूपों में है। उस विराट् के जो पांच अवयव हैं जिसे five aspects कहते हैं उनका एक–एक का चिन्तन–ध्यान करने वाला उस समग्र तत्त्व को जान जाता है। हमारे यहां शास्त्रों में समझाया गया कि शिव, विष्णु, दुर्गा, गणेश और सूर्य, ये उस ब्रह्म के पांच रूप हैं तथा इनके चिन्तन, मनन और ध्यान आदि की प्रक्रिया समझाई गई है।

गणेश परमात्मा का नाम है। सूर्य परमात्मा का रूप है। शिव परमात्मा का ज्ञान है, दुर्गा परमात्मा की शक्ति है और विष्णु परमात्मा का प्रेम है। ये पांच उसके अभिव्यक्त वा अवतरित रूप हैं। आप यह तो जानते हैं कि भगवान् गणेश का जो स्वरूप है, जिस ''वक्रतुण्ड महाकाय'' आदि की व्याख्या की जाती है, उस ॐकार को थोड़ा सा सीधा करके किसी मनुष्य के धड़ के ऊपर रख दें तो आपको ऐसा लगेगा कि बिल्कुल गणेश की प्रतिमा बन गई है क्योंकि ॐकार का जो पीछे का भाग है, वह वक्रतुण्ड के समान अर्थात् हाथी की सूंड के समान घूमा हुआ है। उस ॐकार के अ उ म को depict करने वाला 'ऊ' की

मात्रा जैसे लिखी जाती है, उसके ऊपर चन्द्रबिन्दी लग जाती है, उसको यदि आप सीधा करके रख दो तो ऐसा लगेगा कि जैसे हाथी का मस्तक हो। बगल में बड़े–बड़े हाथी के कान हों। इससे सम्बन्धित मेरी एक छोटी सी पुस्तक है – 'हिन्दू धर्म सूत्र ' उसके ऊपर ॐकार से कैसे गणेश बना, इसको मैंने चित्र में depict कराया है। कहने का अभिप्राय कि यह गणेश उस ॐकार का Personification है। हमारे प्राचीन ऋषियों के पास एक व्यवस्था थी कि वे हर एक सूक्ष्म तत्त्व को समझाने के लिए उसको personify कर देते थे। उसको मानवीय आकृति दे देते थे जिससे मनुष्य उसे अच्छी प्रकार से समझ जाए। रामायण में तुलसीदास जी ने इस गणपति की महिमा का वर्णन करते हुए कहा है कि –

**महिमा जासु जान गनराऊ। प्रथम पूजिअत नाम प्रभाऊ।।**

(रा0 1/19–4)

नाम के ही प्रभाव के नाते गणपति के प्रथम पूजन का विधान है। नाम क्या है परमात्मा का? वेद शास्त्र सभी पुकार कर कहते हैं ॐ। ॐ का ही यह साकार विग्रह गणपति है। ॐ शब्द आकाश तत्त्व का गुण है इसलिए गणेश को लम्बोदर

कहते हैं। आकाश को हमारे यहां उदर कहते हैं। आकाश उस विराट् पुरुष का उदर है वा पेट है। आकाश का जैसे कोई आदि अन्त नहीं है, ऐसे ही उस गणपति का जो उदर है वह अनन्त है, महान् है, उसका कोई आदि और अन्त नहीं है इसलिए लम्बोदर के रूप में उसे depict किया जाता है। जैसे आकाश का गुण शब्द है, ऐसे मैंने अभी आप को बताया कि नाम शब्द से सम्बन्धित है इसलिए यह शब्द वा नाम ॐकार के रूप में depict किया जाता है। जैसे गज वा हाथी के बड़े– बड़े कान बताये गए हैं यह इसलिए कि शब्द वा विषय को सम्यक् प्रकार से ग्रहण करने के लिए बड़े–बड़े कानों की सुनने में सजगता की आवश्यकता होती है। आँख चाहे छोटी–छोटी क्यों न हो जैसे गणेश की आँखें छोटी–छोटी हैं परन्तु कान बहुत बड़ा होने चाहिए। अभिप्राय यह कि वेद–शास्त्र को श्रवण करने के लिए वा शब्द तत्त्व का बोध प्राप्त करने के लिए कान की विशेष महिमा है। शब्द कोई दृश्य तत्त्व नहीं है जो आँख से दिखाई दे इसलिए कान की इसमें महिमा है। यह सारा जो personification है उस विराट् पुरुष के नाम का, वह ॐकार स्वरूप गणेश है।

इसी तरह दुनिया में जहा कहीं भी आपको रूप

दिखाई देगा, उस रूप का आधार केवल प्रकाश होगा। प्रकाश यदि नहीं है तो दुनिया में अन्धंकार के सिवा और कुछ नहीं दिखाई देगा। विभिन्न रूपों का समाश्रय प्रकाश है। इस पृथ्वी पर यदि प्रकाश का कोई आधार है तो वह सूर्य है इसीलिए हम हिन्दू सूर्य की उपासना करते हैं। सावित्री देवता के रूप में गायत्री मन्त्र सूर्य देवता से सम्बन्धित है। यह तो आप लोग जानते हैं कि हर एक हिन्दू के लिए गायत्री मन्त्र परममन्त्र वा गुरुमंत्र बताया गया है। इस के बिना कोई भी वैदिक कर्म हो ही नहीं सकता। उस गायत्री मन्त्र से सम्बन्धित जो परमात्मा का तेजोमय स्वरूप है, वो सूर्यमण्डल है वा सूर्यदेवता है इसलिए वेद कहता है कि–"सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च"। दुनिया में जितने जीव हैं, प्राणी हैं, सब की आत्मा सूर्य है। सूर्य परमात्मा का परम प्रकाश स्वरूप है। परमात्मा कैसा है? कहा कि "आदित्य वर्णं तमसः परस्तात्"। यजुर्वेद की श्रुति कहती है कि परमात्मा आदित्यवर्ण है, सूर्य के समान है अतः यह परमात्मा का रूप है।

शिव परमात्मा का ज्ञान है क्योंकि "शिवः कल्याणकर्ता च"। शिव कहते हैं कल्याणकर्ता को। यजुर्वेद में आया है– "नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमः शंकराय च मयस्कराय च

नमः शिवाय च शिवतराय च''। आदि मन्त्रों के द्वारा उसी ज्ञानस्वरूप परमात्मा की महिमा का वर्णन किया गया है इसलिए हमारे यहां बोलचाल की भाषा में शिव को परम गुरु कहते हैं। गुरु को शिवस्वरूप मानते हैं। तुलसीदास के शब्दों में – ''वन्दे बोधमयं नित्यं गुरुं शंकररूपिणम्,'' क्योंकि गुरु ज्ञानस्वरूप है, ज्ञानदाता है। भगवती पार्वती कहती हैं –

**तुम त्रिभुवन गुरु बेद बखाना। आन जीव पांवर का जाना।।**

शिव परमात्मा के ज्ञान की personification है। जैसे ज्ञान के आश्रित ही जन्म है, मृत्यु है, अच्छाई है, बुराई है, विष है, अमृत हैं अर्थात् जो कुछ भी द्वन्द्वात्मक जगत् है, वह किसके आश्रित है? ज्ञान के आश्रित है। इसी रूप से भगवान् शंकर के स्वरूप को आप देखिए। सारा द्वन्द्वात्मक जगत् उनके आश्रित है। जहा पर अमृत का प्रतीक जीवनदायिनी गंगा और चन्द्रमा उनके मस्तक पर हैं, वहां पर ही मृत्युदायक विष और सर्पों की माला उनके गले में है। ये दोनों मृत्यु और जीवन के प्रतीक हैं। जहां भोगदायिनी पार्वती उनके अंक में विराजमान है, वहीं पर योग का प्रतीक उनका नग्नवेष और शमशान की राख उनके शरीर पर लगी हुई है। इसी रूप से भोग और योग

माने त्याग और प्रेम या जीवन और मृत्यु, ये समस्त द्वन्द्वात्मक तत्त्वों का जो समाश्रय है वह ज्ञानस्वरूप भगवान् शंकर हैं। सक्षेप में आप को मैं बता रहा हूँ जिससे श्रोतागण इस रहस्य को समझ लें कि सनातन धर्म किस ढंग से किस भाव से इन पञ्चदेवों की उपासना करता है।

जैसे शिव ज्ञानस्वरूप हैं, ऐसे वह शक्ति स्वरूपा भगवती दुर्गा है। परमेश्वर की शक्ति किस रूप में प्रकट होती है? दुर्गा के रूप में। समस्त देवताओं के शरीर से जो तेज प्रकट होता है, वही एक होकर दुर्गा के रूप में प्रकट हो जाता है, ऐसा पुराणों में इसका वर्णन मिलता है। उपनिषदों में तो–

**अहं ब्रह्मस्वरूपिणी। मतः प्रकृतिपुरुषात्मकं जगत्।**

वह भगवती स्वयं अपने स्वरूप का वर्णन करती है। तो परमात्मा की जो परा शक्ति है, जिसके लिए श्वेताश्वरतर की उपनिषद् कहती है "परास्य शक्तिर्विविधैव श्रूयते स्वाभाविकी ज्ञानबलः क्रियाच"। यह परा शक्ति ही भगवती दुर्गा है।

अब इन सब से परे जो परमात्मा का करुणामय, प्रेममय और अनुरागमय स्वरूप है, जिस स्वरूप से वह विश्व का भरण–पोषण करता है, वह विष्णु है। भरण–पोषण के लिए

अनुराग की जरूरत होती है, प्रेम की जरूरत होती है। जिस स्वरूप से प्रभु भरण–पोषण करते हैं, जिस प्रेम से आबद्ध हो दीन जनों की पुकार सुनकर के वह नगें पांव भी दौड़ पड़ते हैं, वह प्रेम स्वरूप है भगवान् विष्णु। उन्हीं के अवतार हैं प्रेमस्वरूप भगवान् राम और प्रेमस्वरूप भगवान् कृष्ण। राम–कृष्ण आदि जो अवतार हैं, वे सब उस करुणामय भगवान् के प्रेम स्वरूप हैं। हमारे यहां शास्त्रों में बताया गया है कि किसी के नाम को आप जल्दी जान जाएंगे, किसी के रूप को भी आप देख लेंगे। उसके साथ बात–चीत से उस व्यक्ति का ज्ञान भी आप प्राप्त कर सकते हैं, उसकी शक्ति को भी आप महसूस कर सकते हैं लेकिन किसी के प्रेम को पाना बहुत ही कठिन बात है। इसी रूप से बताया गया है कि परमात्मा का प्रेम प्राप्त करना बहुत ही कठिन है। तभी कहते हैं कि भगवान् विष्णु का दर्शन वा प्राप्ति बहुत ही दुर्गम साधना का परिणाम है क्योंकि वह प्रेम स्वरूप है। परमात्मा का प्रेम पाने का अर्थ होता है कि परमात्मा के सम्रग रूप को प्राप्त कर लेना।

यह पञ्चदेव उपासना का रहस्य है। इसमें गणेश सर्वप्रथम है इसलिए प्रत्येक उपासना के प्रारम्भ में –

**गणानां त्वा गणपतिं हवामहे, प्रियाणां त्वा प्रियपतिं हवामहे,**
**निधीनां त्वा निधिपतिं हवामहे,**
**वसोमम आहमजानि गर्भधमा त्वमजासि गर्भधम्।**

आदि मन्त्रों का जो प्रयोग है, ये उस परमात्मा के प्रथम नाम के अवबोधक हैं। वैसे 'गणानां त्वा गणपतिं हवामहे'– आदि जो मन्त्र है यह यजुर्वेद के 16वें अध्याय का मन्त्र है जिसमें इस रहस्य का उद्घाटन किया गया है कि परमात्मा समस्त गणों का माने समस्त जीवों का "गणानां जीवानां अधिपति" अधिपति है। अध्यात्मभाव में इसका अर्थ और ही होता है। इसका एक रहस्य और मैं आप लोगों को बता दूँ जिससे आप को प्रसन्नता एवं आत्मतुष्टि प्राप्त होगी।

यह गणेश तत्त्व अहं तत्त्व है। जिस अहं तत्त्व की उत्पत्ति भगवती से होती है, बुद्धि से होती है। हमारे यहां शास्त्रों में बुद्धि को ही भगवती माना गया है। "या देवी सर्वभूतेषु बुद्धि रूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नम"। अतः बुद्धि साक्षात् भगवती है और भगवती ही बुद्धि रूप में प्रकट हुई है। उपनिषद् में देवताओं ने भगवती से यह बात पूछी है कि भगवती ! तुम्हारा निवासस्थान कहां है? तो उसने उत्तर

में कहा कि जो अन्तर्तम में बुद्धि रूपी गुहा है, वही मेरा निवासस्थान है। वह स्वयं बुद्धि स्वरूपिणी है। तो बुद्धि ही भगवती है और आत्मा ही शिव है। आप ने यह भी सुना होगा कि गणेश की उत्पत्ति में भगवती ही कारण रही है, शिव नहीं इसलिए शिव ने गणेश का शिरच्छेदन कर दिया, तत्पश्चात् गज का मुख लगा करके फिर उसको पुत्र रूप में स्वीकार किया। पहले गणेश ने भी शिव को पिता रूप में स्वीकार नहीं किया, वो अपने को माँ का ही पुत्र मानते हैं। बड़ा ही सुन्दर और तात्त्विक विश्लेषण है। सनातन धर्म का जो mysticism अर्थात् रहस्यवाद है उसका यह गुप्ततम रहस्य है, जो मैं आप को बताने जा रहा हूँ। बड़े ही ध्यान और चिन्तन से यदि आप सुनेंगे तो उससे आप को बहुत लाभ होगा।

आत्मा शिव है और बुद्धि भगवती है, ऐसा वेद कहता है, शास्त्र कहता है। बुद्धि में जब आत्मा का प्रकाश पड़ता है, तब उसमें से अहं रूपी पुत्र की उत्पत्ति होती है जिसको गणेश कहते हैं। अहं को गणेश इसलिए कहते हैं कि गणानां इन्द्रियाणां– जितने गण हैं वो इन्द्रियाँ हैं। पांच ज्ञानेन्द्रियां, पांच कर्मेन्द्रियां, एक मन ये 11 इन्द्रियां हैं, उसके बाद जो पञ्चमहाभूत और

पञ्च विषय हैं, ये सब गण हैं। जिनकी गणना की जाय उनको गण कहते हैं। इन सब को एक–एक करके गिना गया है। सांख्य शास्त्र इन्हीं के ऊपर प्रतिष्ठित है क्योंकि ये सांख्यानाम् हैं अर्थात् सम्यक् ज्ञान और एक–एक की संख्या का विवेचन करता है इसलिए इन सब को गण कहा गया है। तो गणनां त्वा अर्थात् ये गणसमूह हैं। इनका अधिपति कौन है? अहं।

अहं जब सुषुप्ति में लय हो जाता है, तमोगुणी बुद्धि में अर्थात् घोर निद्रा में चला जाता है तो ये सारे गण उसके साथ सो जाते हैं। जब अहं जागता है तो ये सारे गण जाग जाते हैं। इन समस्त गणों का अनुशासक जो है, वह 'गणानां ईशः गणेश' है। वह अहं है और वह अहं यह भी नहीं जानता कि उसका बाप कौन है अर्थात् वो केवल मां को ही जानता है, बुद्धि को ही जानता है क्योंकि वह उसी की सन्तान है इसलिए जब बुद्धि के समक्ष बुद्धि की सेवा में वह स्वयं को समर्पित करता है और कभी आत्मप्रकाश पड़ता है तो वह उस से विचलित हो जाता है। वह उस आत्मा से लड़ने को तैयार हो जाता है। उसमें द्वन्द्वात्मक वृत्ति का जन्म हो जाता है जिसे द्वैत भाव कहते हैं। तो द्वैत भाव का आविर्भाव होने पर ही वह अहं

कहता है कि मैं अलग हूँ, मेरी मां अलग है, तुम कौन होते हो? आत्मा से वह अपने को अलग स्वीकार करता है। वह समस्त देवताओं का अधिपति है। ये सारे देवता तो बाद में पैदा होते हैं। इन्द्र आदि देवता सारे इन्द्रियों के द्योतक हैं। इन समस्त देवताओं पर वह गणेश विजय प्राप्त कर लेता है। अहं की सब पर विजय हो जाती है परन्तु भगवान् शिव वा आत्मा को तो पता है कि गणेश मेरी ही अभिव्यक्ति है।

यदि आत्मा का प्रकाश बुद्धि में न पड़े तो अहं का जन्म ही नहीं हो सकता लेकिन वह अहं इस बात को नहीं जानता इसलिए वह परमात्मा शिव जो है, वह अपने त्रिशूल से गणेश के सिर का भेदन कर देता है, अहंकार की वृत्ति का नाश कर देता है। जब अहं की द्वैत दृष्टि का नाश कर देता है तो उस अवस्था में बुद्धि रूपी भगवती अपने पुत्र के वियोग में विलाप करती है और कहती है कि हे, स्वामी! यह अहं तो आप की ही अभिव्यक्ति है। आत्मा ही पुत्र रूप में प्रकट होता है। यह तो आप की ही आत्मा है। आपने इसका वध क्यों किया है? भगवती के उस विलाप पर प्रसन्न हो करके वह जो आत्मस्वरूप परमात्मा शिव हैं, वह पुनः उसे गजमुख लगा कर जीवित करते

हैं। गजमुख का अभिप्राय शास्त्रों में बताया गया है–गज में दो अक्षर होते हैं–ग और ज। ग– गति और ज– जायमान्। तो गति और जायमान्, इन दो भावों से युक्त जो है अर्थात् संसार के समस्त रूपों में जिसकी गति है, संसार के समस्त रूपों का जो आधार है, ऐसे पूर्ण ज्ञान से युक्त हो करके उसमें गजमुख का सन्निवेश भगवान् शिव करते हैं और फिर वह अपने पिता को पहचान लेता है क्योंकि पिता को पहचानने वाला जो सर्वपूजनीय गणेश बनता है, वह गणनां ईशः तो है ही लेकिन वह आत्मा की सन्तान के रूप में भी है। मेरे कहने का अभिप्राय कि तब वह शुद्ध अहं हो जाता है। शुद्ध अहं होकर के ही वह शिव स्वरूप होता है।

जहां पर यजुर्वेद में शिव के स्वरूप की विवेचना की गई है, वहां पर गणपति के स्वरूप की भी विवेचना की गई है। गोस्वामी तुलसीदास ने अपनी रामायण में कहा है –

**अहंकार सिव बुद्धि अज मन ससि चित्त महान।**

(रा0 6/15 क)

जब तलक तो द्वैतात्मक अहंकार होता है, तब तलक तो वह बुद्धि को ही अपनी माँ मानता है, आत्मा का परिचय

उसे नहीं होता। आत्मा से अलग अपने को स्वीकार करता है और उसमें अहं वृत्ति होती है जो द्वैतभावात्मक है लेकिन जब भगवान् शंकर (आत्मदेव) के त्रिशूल से उसका शिरच्छेदन हो जाता है यानी कि उस भौतिक अहं का नाश हो जाता है तो वहां पर शुद्ध अहं का आविर्भाव हो जाता है, जिसको गजमुख कहते हैं। गजमुख जो है, वह शुद्ध अहं है।

शुद्ध अहं में ही अहं ब्रह्मस्मि, शिवोऽहं की अनुभूति होती है। शिवोऽहं की अनुभूति होने से आत्मा ही अहं हो जाता है और अहं ही आत्मा हो जाता है। वह अपनी मां और बाप दोनों को पहचान जाता है। वह जानता है कि ज्ञानात्मिका शक्ति भगवती है, जो शिव की ही शक्ति है और मैं तो शिव का ही पुत्र हूँ। पिता, पुत्र और मां इन तीनों में अभिन्नता हो जाती है और तीनों एक रूप हो करके समग्र ब्रह्म के रूप में प्रतिष्ठित हो जाते हैं। अध्यात्म दृष्टि से यह एक रहस्यात्मक विश्लेषण है गजमुख का, गजानन का।

आज मैंने आप को अध्यात्म दृष्टि से गणेश क्या है, इस रहस्य का भी थोड़ा सा संकेत किया है। पौराणिक स्तर पर गणेश का क्या विवेचन है, वह भी शिव–पार्वती और गणेश की

कथा के माध्यम से संकेत किया है और तात्त्विक ब्रह्म के रूप में गणेश का क्या स्थान है, वह भी मैंने आप को बताया है पञ्चदेवोपासना के क्रम में। गणेश चतुर्थी को गणेश का चिन्तन, मनन और ध्यान करते हुए उनका मन्त्र – "ॐ गं गणपतये नमः" का विशेष रूप से वेदों में प्रयोग किया गया है और गणेश–गायत्री का वर्णन हमें सबसे पहले महानारायणोनिषद् में मिलता है। यह कृष्ण यजुर्वेद के तैत्तिरीय संहिता का है। इस संहिता में हमें सर्वप्रथम–

**एकदन्ताय विदमहे वक्रतुण्डाय धीमहि तन्नो देवी प्रचोदयात्।**

इस का दर्शन होता है और यह गणेश गायत्री है वहां पर ऋषि कहता है कि 'एकदन्त– वक्रतुण्ड जो भगवान् गणपति हैं, उनको मैं जानता हूँ, उनके द्वारा मेरी बुद्धि प्रेरित हो'। यहाँ पर गणेश का नाम दन्ती है। दन्ती माने एकदन्त दयावन्त चार भुजाधारी जिसे कहते हैं। एकदन्त बाह्यजगत् के अद्वैत का अवबोधन कराता है। जैसे हम कहते हैं कि खाने के दांत अलग होते हैं, दिखाने के दांत अलग होते हैं। कहने का अभिप्राय कि सब को आत्मसात किए हुए भी सब से अलग होने की स्थिति को व्यक्त करना, यह उसका स्वरूप है। गणपति के

आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक तीनों स्वरूपों का मैंने आपसे विवेचन कर दिया है। मुझे विश्वास है कि इससे श्रोतागण सन्तुष्ट होंगे और कुछ जानना हो तो आप पूछिए।

**प्रश्नकर्ता** – हार्दिक धन्यवाद स्वामी जी! बहुत सारे प्रश्न थे जिनका उत्तर आप ने स्वयं ही दे दिया लेकिन एक प्रश्न जो हमारे श्रोतागण गणेश चतुर्थी के अवसर पर पूछते हैं, वह मैं आपसे पूछना चाहूंगा। पुराणों में यह कहा गया है या ऐसा मत है कि इस दिन चन्द्रमा को नहीं देखना चाहिए क्योंकि उससे झूठा कलंक लगता है। ऐसी कहानी भी है कि भगवान् श्रीकृष्ण ने चन्द्रमा को देखा था और झूठा कलंक लगा था। कृपया आप इस पर कुछ प्रकाश डालें।

**गुरु जी** – हाँ, पुराणों में इसका वर्णन है कि चतुर्थी के दिन चन्द्रमा का दर्शन नहीं करना चाहिए। चन्द्रमा के दर्शन करने से कलंक लगता है। क्यों कलंक लगता है? इस में कई कारण हैं, कई कहानियां हैं। इसमें से एक रहस्य की बात बताऊँ आपको। आपने देखा होगा कि भगवान् शंकर के मस्तक पर द्वितीया का चन्द्रमा है। जब हम अपना mythological इतिहास पढ़ते हैं (इसे मैं mythological इतिहास इसलिए

कहता हूँ, क्योंकि यह प्रकृति का, सृष्टि का इतिहास है किसी व्यक्ति का नहीं) व्यक्ति का इतिहास व्यक्ति के जीवन से सम्बन्धित होता है लेकिन जो सृष्टि का इतिहास है उसको हमारे ऋषियों ने भिन्न–भिन्न नामों से अभिव्यक्त किया है।

हमारे यहाँ इतिहास की कथा है। इसमें अत्रि और अनसूया से उत्पन्न चन्द्रमा नाम का पुत्र अपने गुरु बृहस्पति के यहां पढ़ने जाता है। उस समय बृहस्पति घर पर नहीं होते हैं, किसी यज्ञ में गए हुए होते हैं। बृहस्पति की स्त्री तारा ऋतुमति होती है। ऋतुमति माने मासिक धर्म में होती है। अपने यहाँ शास्त्रों में ऐसा विधान है कि मासिक धर्म के पश्चात् जब स्त्री स्नान के पश्चात् शृंगार करती है, यदि उस समय उसका पति उसके पास नहीं है और उसको रतिदान नहीं देता तो वह ब्रह्महत्या के पाप का भागी होता है इसलिए ऐसी स्थिति में शास्त्र में यह भी नारी से कहा गया है कि वह पति की अनुपस्थिति में अपनी रुचि अनुसार किसी पुरुष से सम्बन्ध करके सन्तान की अभिलाषा व्यक्त कर सकती है। हम पुराणों में पढ़ते हैं कि इसी प्रकार से बृहस्पति की अनुपस्थिति में तारा ने चन्द्रमा से (जो कि उस समय उसका शिष्य था और वहीं पर

रहा करता था) सन्तान की याचना की और चन्द्रमा ने गुरु पत्नी के साथ गमन किया। रामायण में भी गोस्वामी तुलसीदास जी ने कहा कि –

**ससि गुर तिय गामी नघुषु चढ़ेउ भूमिसुरजान।**
**लोक बेद तें बिमुख भा अधम न बेन समान।।**

(रा0 2/228)

इस चन्द्रमा को गुरुपत्नी गमन का बहुत बड़ा कलंक लगा। उस कलंक के सम्बन्ध को चतुर्थी से सम्बन्धित मानते हैं। चन्द्रमा चतुर्थी को कलंकित हुआ है इसलिए यदि कोई चतुर्थी के दिन चन्द्रमा का दर्शन करता है तो उस दिन कलंकित अवश्य होता है, ऐसा पौराणिक क्रम है। इसी विश्वास के साथ लोग चतुर्थी के दिन चन्द्रमा नहीं देखते हैं। वह चन्द्रमा जो ऋषि से सम्बन्धित था, वह भौतिक चन्द्रमा कैसे बन गया?

कथा तो इस भौतिक चन्द्रमा की है नहीं। पुराणों में कथा तो अत्रि और अनुसूया के पुत्र चन्द्रमा ऋषि की है। उसका इस चन्द्रमा से क्या सम्बन्ध है? उसमें ये समझाते हैं कि हमारे यहां जैसा कि अभी मैंने बताया कि जितने भौतिक

तत्त्व हैं, सभी ऋषि से सम्बन्धित होते हैं। ऋषि शब्द का अर्थ होता है ज्ञान से युक्त। समस्त भौतिक तत्त्वों का ज्ञान से सम्बन्ध है क्योंकि बिना ज्ञान के कोई तत्त्व है ही नहीं। हर एक तत्त्व से कुछ न कुछ विशिष्ट ज्ञान की प्राप्ति होती है। इसी प्रकार से यह चन्द्रमा जो है वह भी इसी भाव से सम्बन्धित है। चन्द्रमा को कलंकित करने का जो कर्म है जैसा कि आप देखते हैं कि पहले द्वितीया का चन्द्रमा आविर्भूत होता है, उसमें आप केवल रेखा मात्र देखते हैं। तृतीया का उससे भी थोड़ा दिखाई देगा, बाकी के तीन अंश उसके अधकारमय होते हैं इसलिए उसे कलंकित कहते हैं। कलकित होने के नाते यानी अंधकारमय होने के नाते उसका दर्शन अभीष्ट नहीं माना जाता। चित्त के ऊपर इसका बुरा प्रभाव पड़ता है, विपरीत प्रभाव पड़ता है इसलिए शास्त्र की दृष्टि से भी चतुर्थी का चन्द्रमा उपयोगी नहीं होता। किसी भी शुभ कार्य में उसका प्रयोग नहीं होता। जैसे हम कोई शुभ कार्य करते हैं तो ज्योतिष शास्त्र के अनुसार मुहूर्त निकालते हैं, मुहूर्त में भी चतुर्थी का चन्द्रमा वर्जित है। किसी भी शुभ काम में उसका प्रयोग नहीं होता। ये कई कारण हैं जिनके द्वारा आध्यात्मिक, आधिभौतिक और ऐतिहासिक जिनसे

चन्द्रमा को कलंकित मानते हैं और उस दिन चन्द्रमा नहीं देखते हैं।

गणपति की आराधना करने वाली नारी जो पुत्र या सन्तान की आकांक्षा लेकर के गणपति की उपासना कर रही है, उस दिन यदि ऐसे कलंकित व्यक्ति का स्वरूप देखती है तो स्वभावतः उस का प्रभाव चित्त पर पड़ता है। जैसा कि मैंने आप को बताया कि कोई भी अभीप्सा शुद्ध भाव से ही सफलता प्रदान करती है। भगवान् श्रीकृष्ण को कलंक लगा तो किसके नाते लगा? स्यामन्तक मणि के नाते। तो वह क्या है? वह सम्पत्ति है। सम्पत्ति के नाते, सन्तत्ति के नाते वा सद्बुद्धि के नाते, तीनों प्रकार से यदि आप चतुर्थी के चन्द्रमा को देखते हैं तो इन तीनों भावों के कलंकित होने की सम्भावना है इसलिए चतुर्थी के दिन चन्द्रमा का दर्शन नहीं करते हैं। ज्योतिष, इतिहास और भौतिक दृष्टि से भी उसका असर पड़ता है इसलिए इसको हमारे यहां वर्जित माना गया है।

**प्रश्नकर्ता** – गुरु जी मैं कुछ बातें गणेश जी के बारे में आप से पूछना चाहूँगा। श्रीगणेश को विनायक कहा गया है। विनायक का क्या अर्थ होता है?

**गुरु जी** – विनायक शब्द का अभिप्राय विघ्नहर्ता से है। जो विघ्नहर्ता है, वह विशेष रूप से नायक होता है। नायक माने स्वामी। विनायक का अर्थ होता है विशिष्ट स्वामी। वह विघ्नकर्ता, दुःखहर्ता के रूप में, कष्टहर्ता के रूप में वन्दित है, पूजित हैं इसलिए उनका नाम विनायक है। उनके मन्त्रों में भी इस प्रकार के शब्दों का प्रयोग हमें देखने को मिलता है। यह विनायक शब्द जो है वह विशेष रूप से प्रभु के अर्थ में प्रयुक्त होता है।

**प्रश्नकर्ता** – एक बात और जो हमारे श्रोतागण हमसे पूछते हैं कि श्रीगणेश का वाहन मूषक है। इसका क्या अर्थ है?

**गुरुजी** – हां, यह भी एक बड़े मजे की बात है। हमारे यहां जितने देवता हैं, कोई भी देवता पैदल नहीं हैं। सब किसी न किसी वाहन पर रहते हैं। इन पञ्चदेवों में भी भगवान् विष्णु का वाहन गरुड़ है। भगवती दुर्गा का वाहन सिंह है। शिव का वाहन वृषभ है। सूर्य स्वयं सात घोड़ों वाले रथ पर संवार होकर के चलते हैं और भगवान गणपति का वाहन मूषक है। वाहन का अर्थ होता है कि जिसके ऊपर जिसकी सवारी हो।

सवारी हम उसी पर करते हैं जिसको हम अपने अधीन रख सकें। जिसको हम अपने अधीन रखना चाहते हैं, उस पर हम सवार हो जाते हैं। यह तो आप बोल–चाल की भाषा में भी सुनते हैं कि जो जिसके अधीन होता है उसके लिए कहते हैं कि अरे जाने दो उसके ऊपर तो वो सवार है।

सवार होने का अभिप्राय कि उसके ऊपर उसका प्रभुत्व है। तो मूषक एक वृत्ति है। हमारे यहा सनातन धर्म में गणपति का एक और अर्थ होता है वह भी मैं आप को बताता हूँ। गणपति का मन्त्र हैं जिसमें वह बात समझाई गई है –

**नमो व्रातपतये नमो गणपतये नमो प्रमथपतये नमस्तेऽस्तु लम्बोदराय एकदन्ताय विघ्ननविनाशिने गौरीसुताय मंगलमूर्तये नमो नमः।**

इस मन्त्र के द्वारा गणपति की उपासना करने का विधान है। गणपति पर जो कुछ भी समर्पण होता है दूर्वादलादि, अक्षतादि वा पुष्पादि वो इसी मन्त्र से होता है। जो भी गणपति की पूजा करना चाहते हैं वो इस मन्त्र को याद कर लें। इस मन्त्र के साथ ही गणपति की अर्चना करें।

इसका अर्थ भी मैं आप को बता दूँ। इसमें सब से

पहले कहा गया है "नमो व्रातपतये"– व्रात माने समूह। आप अपनी बोलचाल की भाषा में बारात कहते हो न! व्रात शब्द से ही बना है बारात। शुद्ध शब्द है व्रात। व्रात माने समूह। "व्रातपतये नमः" समूहों के पति को नमस्कार है। समूहों का पति कौन होता है? वह राजा होता है। राजा का काम क्या है? समाज मे जितने दूषित तत्त्व हैं, उनका निरसन करना, उनका शमन करना और जो सद्गुण हैं, उनका आविर्भाव करना, उनकी अभिवृद्धि करना। तो जो दुर्गुण तत्त्व हैं, उनमें सबसे बड़ा दुर्गुण है, दूसरे के अधिकारों का अपहरण। सारे दोष यहीं से शुरु होते हैं। जो दूसरे के अधिकारों का अपहरण करता है, उसको हमारी भाषा में मूषक (चूहा) कहते हैं। मुष् धातु है व्याकरण शास्त्र में जिसका अर्थ होता है चोरी करना वा चुरा लेना अर्थात् दूसरे के अधिकारों का अपहरण करना। रामायण में आप ने सुना होगा,तुलसीदास जी लिखते हैं–

**खल बिनु स्वारथ पर अपकारी।**
**अहि मूषक इव सुनु उरगारी।।**

कहा कि खल या दुष्ट कैसा होगा? कहा कि सांप और मूषक (चूहे) के समान। मूषक आप का बड़ा से बड़ा

नुकसान कर देगा लेकिन उस के बदले में उसको मिलने वाला कुछ भी नहीं है। आप का कपड़ा काट दिया, क्या मिल गया उसको? कुछ भी नहीं। भारत में देखा होगा आपने कि मूषक खेत के खेत गेहूँ और जौं काट कर गिरा जाते हैं। उससे उनको कुछ भी नहीं मिलता लेकिन नुकसान कर जाते हैं, तो "खल बिनु स्वारथ पर अपकारी"। उससे उनको कोई लाभ नहीं होता। सांप ने किसी को काटा तो उससे उसका पेट तो नहीं भरा? लेकिन आदमी मर जाता है। उससे क्या मिला सांप को? कुछ भी नहीं। सांप और मूषक, ये दोनों बिना स्वार्थ के किसी का अहित कर जाते हैं। दुनिया में अपने को सुख देने के लिए दूसरों को दु:ख देने वाले बहुत मिल जाएंगे लेकिन ये ऐसे दुष्ट प्राणी हैं कि ये स्वयं सुखी न होकर भी दूसरों को दु:ख देते हैं। इनको तुलसीदास जी ने खल कहा है। तो खल इस प्रकार के होते हैं जैसे चूहा और सांप। चूहे पर शासन कौन करेगा? राजा ही उसका अनुशासक हो सकता है, कंट्रोलर हो सकता है। राजा के ही यह कर्त्तव्य हैं कि वह इस प्रकार से दूसरे के अधिकारों का अपहरण करने वाला जो है, उसको अनुशासित करें और सद्‌गुणों की वृद्धि करे। यह मूषक जो है यह दुर्गुणों

का प्रतीक है। मूषक अधेरे में ही काम करता है, यह भी देखा होगा आपने। प्रकाश होगा तो मूषक अन्दर चला जाता है, बिल में। ऐसे ही चोर वा दुष्ट लोग छुप करके ही आढ़े में वा अंधेरे में ही काम करते हैं और अज्ञान ही उनका धन होता है। ये सारे जितने दुर्गुण हैं, इन समस्त दुर्गुणों का प्रतीक मूषक है।

मूषक दुष्ट वृत्ति वाली प्रजा का अवबोधन कराता है। वहाँ पर ''व्रातपतये नमः'' जो मनुष्यों के समूह का स्वामी राजा है, वह उन पर शासन करता है। गणेश का एक अर्थ राजा भी होता है – ''गणानां जनानां ईश: गणेशः''। समस्त प्राणियों का जो अधिपति राजा है वह गणेश है इसलिए बताया कि राजा के कान बड़े–बड़े होने चाहिए। राजा की आँख छोटी–छोटी होनी चाहिए। राजा तो राजमहल में रहता है। देखता तो वह कम दूरी तक है लेकिन गुप्तचरों के द्वारा सुनता बहुत कुछ है यानी राजा के जो कान है, आँख हैं, गुप्तचर हैं जो दूर–दूर तक का समाचार राजा को लाकर देते हैं। राजा का उदर बहुत विशाल होना चाहिए। दुनिया की सारी बातें सुन करके वे उसमें समाहित कर ले। उसकी नाक बहुत लम्बी होनी चाहिए। हाथी की सूँड को कर कहते हैं –

करि कर सरिस सुभग भुज दण्डा।

रामायण में तुलसीदास जी कहते हैं कि हाथी की सूँड ही हाथी का हाथ है। राजा के जो हाथ हैं इतने लम्बे होने चाहिए जोकि प्रजा के सर पर पहुंच जाएँ और सब की रक्षा करें। सब के अन्दर क्या कुछ है, ये सारा वह समझ जाए। यह गणेश जो है, यह एक प्रकार से राजा के प्रतीक हैं। हमारे यहा आर्य समाज के प्रवर्तक स्वामी दयानन्द ने यजुर्वेद में गणेश का अर्थ राजा किया है। कहीं–कहीं तो केवल उन्होंने गणनायक ही अर्थ किया है, सेनापति भी अर्थ किया है लेकिन वेद में उसका अर्थ राजा ही नहीं है, उसके अनेक अर्थ हैं और उसमें एक अर्थ जो है, वह राजा ही है।

"नमो व्रातपतये नमो गणपतये"। व्रातपतये माने समूहों का जो पति है और गणपति माने श्रेष्ठगणों के अधिपति। फिर प्रमथपतये– यह भगवान् शंकर के गणों का नाम है प्रमथ अर्थात् प्रमथनशील। अध्यात्मभाव में तो अर्थ होगा जो प्रमथनशील है। प्रमथनशील तो मन है जिसको अहं कंट्रोल करता है। जैसा कि अभी मैंने आप को बताया कि गणेश माने शुद्ध अहं है। तो शुद्ध अहं ही उस प्रमथनशील मन को कंट्रोल करता है।

शुद्ध अहं ही इन्द्रियों के समूह को कंट्रोल करता है। वैसे प्रमथ जो हैं, वे शिवगण हैं। शिवगण माने कल्याणकर्ता राजा के गण वा अंगरक्षक या जो उसके सेवक हैं जिन्हें राजपुरुष भी कहते हैं, जो समाज में उसकी बुराइयों को दूर करने में लगे हैं, उन सब का भी अधिपति राजा ही होता है इसलिए नमस्ते अस्तु– तुम्हें नमस्कार हो।

"लम्बोदराय" –लम्बे उदरवाले, एकदन्तवाले और विघ्नविनाशने समस्त विघ्नों का नाश करने वाले, शिवसुताय –शिवपुत्र "श्री वरदमूर्तये नमो नमः"। जो वरद मूर्ति, वरदान प्रदान करने वाले श्रीगणेश है, उनको हम प्रणाम करते हैं, उनकी हम समर्चना करते हैं, उनको हमारा नमस्कार है, ऐसा इस मन्त्र का अर्थ होता है। उसमें मूषक वाहन क्यों है, यह आप समझ गए होंगे कि मूषक कूप्रवृत्तियों का अवबोधक है और उसके ऊपर सवारी गणेश वा ज्ञान की होती है। मूषक उन दृष्ट वृत्तियों वाले मनुष्यों का भी अवबोधक है जिन पर सवारी राजा की होती है। जहाँ पर गणपति माने राजा है, वहाँ पर दुष्टवृत्तियों वाले लोगों का वह अनुशासक है और जहाँ पर गणपति माने आत्मा है अहं है वहां पर वह दुष्टवृतियों का

अनुशासक है। व्यष्टि में दुष्टवृत्तियाँ हैं और समष्टि में दुष्ट मनुष्य हैं। यह मूषक उन्हीं का प्रतीक है और गणपति का वह वाहन है।

**प्रश्नकर्ता** – बहुत–बहुत धन्यवाद स्वामी जी। एक और प्रश्न मेरे मन में है। पुराणों में ऐसा लिखा मिलता है कि गणेश जी की दो पत्नियाँ थी ऋदि और सिद्धि। सिद्धि का अर्थ तो हमें पता है और हमारे श्रोतागणों को भी पता होगा लेकिन ऋद्धि का क्या अर्थ है?

**गुरु जी** – ऋद्धि जो शब्द है, वह विशुद्ध बुद्धि के अर्थ में प्रयुक्त होता है। जहाँ पर बुद्धि होती है, वहीं पर सिद्धि मिलती है। आपने सुना होगा कि ऋद्धि–सिद्धि कहते हैं न कि सिद्धि–ऋद्धि। ऋद्धि प्रथम है, सिद्धि बाद में। तो यह विशुद्ध आत्मा की दो वृत्तियाँ हैं, एक विशुद्ध बुद्धि वृत्ति जिसे ऋद्धि कहते हैं और दूसरी सिद्धि अर्थात् किसी कार्य में सफलता की वृत्ति। जहाँ ऋद्धि है, वहीं सिद्धि है। जहां ऋद्धि नहीं है, वहां सिद्धि भी नहीं है। किसी मनुष्य के जीवन की सफलता में ऋद्धि के साथ ही सिद्धि होती है। ये ऋद्धि–सिद्धि राजा की दो शक्तियां हैं। यदि राजा की नीति अच्छी है, राजा नीतिवान है,

ज्ञानवान है तो उसको सिद्धि माने सफलता मिलेगी। यह तो राजपक्ष में हुआ, जहां गणपति माने राजा है और अहं पक्ष में अहं की यदि शुद्ध वृत्तियां हैं तभी जीवन में सफलता मिलेगी, यदि बुद्धि नहीं है उसके साथ तो सफलता नहीं मिलेगी। किसी भी अर्थ में आप इसे समझ सकते हैं। ऋगतौ धातु से ऋद्धि शब्द बनता है। इसी से ऋषि शब्द भी बनता है। इसी से ऋत् शब्द, ऋतंम्भरा (प्रज्ञा) शब्द भी बनता है। ऋ–गति के अर्थ में है। गति के तीन अर्थ होते हैं– गत् गमन, गत् ज्ञान और गत् प्राप्ति अर्थात् गमन, ज्ञान और प्राप्ति। । किसी भी लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए, पहले उसको जान करके उसी दिशा में गमन करना। फिर उसे प्राप्त कर लेना। तो पहले ज्ञान, फिर गमन, फिर प्राप्ति। इसी रूप से यह आर्य शब्द बनता है। आर्य शब्द भी ऋ–गतौ धातु से ही बनता है। आर्य किसे कहते हैं? जिसने अपने लक्ष्य को जान लिया है, उसकी तरफ जो गतिशील है और उसको जो पा लिया है। ऋ–धातु की बड़ी महिमा है। इसी से ऋत् शब्द बना है। वेद में "ऋतं च सत्यं च"– वहां पर भी ऋत् शब्द इसी अर्थ में प्रयुक्त हुआ है।

**प्रश्नकर्ता** – स्वामी जी एक और तथ्य मैं आप से

पूछना चाहूँगा। गणेश जी को मोदक प्रिय कहते हैं। इसका आध्यात्मिक अर्थ क्या करेंगे?

**गुरुजी** – हमारे यहाँ प्रिय, मोद और प्रमोद, ये तीन शब्द हैं। ये तीनों शब्द आत्मा में निरत रहने वाले अध्यात्म पुरुष के लिए प्रयुक्त होते हैं। उपनिषदों में इसकी बड़ी व्याख्या की गई है। प्रिय क्या है, मोद क्या है और प्रमोद क्या है। वो जो ज्ञानस्वरूप गणेश है, गणाना ईश है, समस्त जीवों का वा इन्द्रियों का व प्राणों का अधिपति है, वह मोदक प्रिय होगा, आनन्दप्रिय होगा। वहाँ आनन्द के सिवाय और कुछ भी नहीं होगा। मोदक का अर्थ होता है–मोदकरी अर्थात् आनन्द प्रदान करने वाला पदार्थ। आनन्दप्रदान करने वाला पदार्थ हो, गुण हो, व्यक्ति हो, वस्तु हो, वह मोदक है। मुद आनन्दे धातु है। तो मोदक का अर्थ है प्रसन्नता प्रदान करने वाला, आनन्दप्रदान करने वाला। लड्डू का नाम भी मोदक पड़ गया। जो लड्डू के शौकीन हैं उनके लिए लड्डू ही प्रसन्नता प्रदान करने वाला हो गया है।

हमारे शास्त्र में भी जहां पर गणपति की पूजा का वर्णन है, उसमें दो पदार्थों से हवन करने का विधान है। एक

मोदक से हवन करना और दूसरा दूर्वादल से हवन करना। दूर्वादल गणेश को बहुत प्रिय है। जैसे भगवान् शंकर को बिल्वपत्र प्रिय है वैसे ही गणेश को दूर्वादल प्रिय है। दूर्वादल के द्वारा एक सहस्त्र गणेश मन्त्र से हवन करना, ऐसा गणेश की सिद्धि में विधान है। जो बुद्धि प्राप्त करना चाहे वा जो धन की प्राप्ति की चाह रखने वाला है, उनके लिए अलग–अलग पदार्थ से हवन करने का विधान है। जो ज्ञान प्राप्त करना चाहते हैं, उनको अलग ढंग से हवन करना है। जो पुत्र प्राप्त करना चाहते हैं, उनको अलग ढंग से हवन करना है। इन तीनों के लिए तीन प्रकार के पदार्थों का निर्देश है। जो सम्पत्ति का इच्छुक हो उनके लिए मोदक वा लड्डू के द्वारा हवन करने का विधान है।

**प्रश्नकर्ता** – बहुत– बहुत धन्यावाद स्वामी ब्रह्मर्षि विश्वात्मा बावरा जी। मैंने आप का बहुत ही अधिक समय ले लिया लेकिन मुझे पूर्ण विश्वास है कि हमारे श्रोतागण आप के इस व्याख्यान, प्रवचन तथा उपदेश से काफी प्रभावित हुए होंगे। उन्हें शिक्षा भी मिली होगी और भविष्य में मैं चाहूँगा कि आप इसी तरह हमारे कार्यक्रम में अपने विचार व्यक्त करते

रहें। बहुत–बहुत धन्यवाद।

गुरुजी – आप के Radio Station के माध्यम से, मैं आप के समस्त श्रोताओं को अनन्त शुभकामनाएं और अपना आन्तरिक शुभाशीष व्यक्त करता हूँ और करुणानिधान भगवान् से प्रार्थना करता हूँ कि वह अपनी करुणा से सभी के हृदय में, सभी के अन्तःकरण में विशुद्ध ज्ञान और शाश्वत शान्ति का सृजन करें जिससे वे अपने लिए और अपने समाज के लिए सदुपयोगी सिद्ध हो सकें। अनन्त शुभकानाओं सहित सभी के प्रति अनन्त आशीर्वाद।

हरि ॐ तत्सत्।

# मूल्यवान् क्या ?

भगवान् श्रीकृष्ण की भाषा में मनुष्य जीते जी इन्सान से भगवान् बन सकता है। हमारे यहाँ का सिद्धान्त है कि मुक्ति तुम्हें जीते जी मिलेगी, मर करके मुक्ति नहीं मिलेगी। यदि तुम जीते जी नरक भोग रहे हो तो मर करके स्वर्ग नहीं जाओगे, याद रखना। मरने के बाद स्वर्ग उसी को मिलता है जो जीते जी स्वर्ग में रहता है। अब यदि जीते जी तुम्हारा स्वर्गीय संस्कार नहीं है, दैवी संस्कार नहीं है, दैवी गुण तुम्हारे में नहीं हैं तो मरने के बाद तुम खाक स्वर्ग में जाओगे? जैसा संस्कार होगा वैसी ही गति होगी। 'या मतिः सा गतिः' इसलिए कबीर बड़े ठेठ भाषा में कहते हैं –

**मुक्ति कहे सो जीवन मुक्ति मरे मुक्ति ना होइ।**
**मरे मुक्ति की आस करे जो कहिए मूरख सोइ।।**

वो कहते हैं कि मुक्ति–मुक्ति जो लोग चिल्लाते हैं, वो तो जीते जी मिलती है। जो कहते हैं कि मर कर हम मुक्त होंगे, वे तो मूर्ख हैं। वे मूर्खों की दुनिया में रहते हैं। मर करके

किसी की मुक्ति नहीं होती। मुक्ति तो जीतेजी होती है। श्रीभगवान् ने स्वयं गीता के दूसरे अध्याय में कहा है कि –

**एषा ब्राह्मी स्थितिः पार्थ नैनां प्राप्य विमुह्यति।**
**स्थित्वास्यामन्तकालेऽपि ब्रह्मनिर्वाणमृच्छति।।**

(गीता 2/72)

ब्राह्मी स्थिति यदि जीते जी नहीं मिलती है तो मरने के बाद भी ब्रह्म की प्राप्ति नहीं होगी इसलिए मैं आप को बता रहा था कि गीता आपको वर्तमान जीवन से सम्बन्धित बातें बताती है। गीता कहती है कि सब से पहले तुम मनुष्य बनो। मनुष्य की सब से बड़ी खूबी क्या है, जानते हो? यास्काचार्य ने बताया कि – ''मननात् मनुष्य'' जो मननशील है वही मनुष्य है। यदि तुम मननशील नहीं हो तो तुम मनुष्य नहीं हो सकते। मनुष्य और पशु में क्या अन्तर है? उन्होंने कहा कि ''पश्यति इति पशुः'' जो दूसरे की वस्तु को देखा और उसे देखकर पाने की लालच हो गई कि यह यदि मेरे को मिल जाए तो बहुत अच्छी बात होती। उस वस्तु की कोई उपयोगिता है तुम्हारे लिए कि नहीं, इससे कोई मतबल नहीं। हमारे पड़ोसी के पास है, हमारे पास हो जाये तो अच्छा होता। जहां पर बिना सोचे, बिना

बिचारे, बिना समझे, केवल देख करके उस वस्तु को पाने के लिए तुम्हारा सिर झुक जाए जैसे पशु हरी घास देखा तो दौड़ पड़ा। वो खाने योग्य है भी कि नहीं, यह उसको चिन्ता नहीं है। इसी रूप से जो व्यक्ति हित और अहित का, अच्छाई और बुराई का, लाभ और हानि का विचार किए बिना, मनन किए बिना किसी वस्तु के पीछे दौड़ता है, उसे हम पशु कहेंगे। वह मनुष्य नहीं है।

मेरा यह सिद्धान्त है और मन्तव्य भी कि दुनिया में जितने संघर्ष धन के लिए हुए हैं और जितनी लोगों की हत्या धन के लिए हुई है, उतने लोगों की हत्या और किसी दूसरे काम के लिए नहीं हुई होगी। उतना बड़ा युद्ध किसी और के लिए नहीं हुआ है अब तक। वह सब से खतरनाक वस्तु है जिसको तुम जीवन में सबसे मूल्यवान समझते हो और उसकी तुम्हारे जीवन में कोई जरूरत नहीं है और जो सब से मूल्यवान वस्तु है, उसका आपको बोध ही नहीं। आप ज़रा सोचिए, आप को यदि ऑक्सीजन कुछ क्षण के लिए न मिले तो क्या आप जी सकते हैं? क्या राय है? Nobody can live without oxygen. इस ऑक्सीजन का आप क्या अदा करते हैं? कोई

टैक्स देते हो इसके लिए? आप लोग मुफ्त श्वास ले रहे हो परमात्मा के इस स्पेस से। जिसके बिना आपका जीवन नहीं रह सकता, इसके लिए आप एक दमड़ी भी अदा नहीं करते हैं। आज तक दुनिया के क्रूर से क्रूर शासक ने भी इस पर कोई टैक्स नहीं लगाया क्योंकि यह उसके कब्जे से बाहर की बात है। इससे कम जरूरत की चीज़ है पानी जो दूसरे नम्बर पर है। पानी मेहनत करके कही से भी ले लो। नहीं तो कहीं प्रपात गिर रहा है उससे ले लो। घर में यदि नल्के से पानी लेना है फिर तो टैक्स देना पड़ेगा। पानी से भी कम आवश्यक है अन्न जिसके लिए रात और दिन मर रहे हो। जिस अन्न के लिए रात और दिन आदमी लगा हुआ है वह पानी से आवश्यक है क्या? सब से आवश्यक क्या है? आक्सीजन जो मुफ्त है। उससे कम आवश्यक है पानी, वो भी मुफ्त है। उससे कम आवश्यक अन्न है, वह मुफ्त नहीं है। उसको पहले मेहनत करके उत्पादन करो, फिर खाओ। मेहनत करते हो तो खाने को मिलेगा नहीं तो भूखे रहोगे।

अन्न से भी कम जरूरी है वस्त्र। आदमी के लिए वस्त्र की जरूरत अन्न से कम है। वस्त्र के बिना भी हम रह

सकते हैं। भारत में बहुत से सन्त हैं जो वस्त्र नहीं पहनते हैं। 1953 से लेकर के 1972 तक हमने भी वस्त्र नहीं पहना। हमने यह वस्त्र पहली बार पहने थे जब लंदन में हीथ्रू हवाई–अड्डे पर जाकर उतरे थे। उससे पहले हम ऐसे ही रहते थे और केवल कौपीन पहनते थे, लोकलज्जा निवारणार्थ। वो भी जब हम भिक्षा करने जाते थे बस्तियों में तब। यह स्थिति थी। कहने का अभिप्राय कि बिना वस्त्रों के आदमी बरसों तक रह सकता है। भारत में हज़ारों नहीं लाखों सन्त ऐसे हैं जो बिना छत के रहते हैं, जिनका अपना कोई घर नहीं है। यह आवश्यक तो है लेकिन उतना आवश्यक नहीं है। इसके लिए नहीं, दुनिया मरती किसके लिए है? जिसकी तुम्हारे जीवन में कोई आवश्यकता नहीं है। सबसे मूल्यवान है क्या? कहा कि सोना (गोल्ड)। उससे मूल्यवान है? हीरा। अब हीरा तुम खाओगे या पीओगे या ओढ़ोगे या बिछाओगे? यह आप के किसी काम में आने वाला नहीं है और सोना? उसको खा सकते हो तुम? नहीं। बिना सोने के करोड़ों नहीं अरबों आदमी होंगे दुनिया में। जो अधिक महत्त्व वाली चीज़ें हैं, जिनका मूल्य बहुत है, उनकी मनुष्य को कोई जरूरत नहीं है। सब से मूल्यवान दुनिया में

हीरा माना जाता है और हीरे की मनुष्य को कोई जरूरत नहीं है उसकी और जिसकी कोई जरूरत नहीं है वह बहुत मूल्यवान है और जिसकी अत्याधिक आवश्यकता है, उसका कोई मूल्य ही नहीं। कितनी विचित्र है यह दुनिया। पशु किसे कहते हैं? शास्त्रकार कहते हैं कि –''पश्यति इति पशु''। जो चमक–दमक देख करके उसको पाने के लिए दौड़ पड़ा और यह भी नहीं सोचा कि यह हमारे काम आएगा कि नहीं, उसे पशु कहते हैं।

एक महात्मा जी जंगल में चले जा रहे थे और उन्हें रास्ते में डाकूओं द्वारा गिरा दी गई अशर्फियों और सोने की थैलियां मिली। महात्मा उन को देख कर चिल्ला रहे थे–डायन है, डायन है, डायन खा जाएगी। घोड़े पर सवार चार राजकुमार जा रहे थे। उन्होंने देखा कि महात्मा चिल्लाते जा रहे हैं। महात्मा से उन्होंने पूछा कि क्या हुआ? महात्मा ने कहा कि अरे बच्चो! उधर मत जाओ! उधर डाईन है। डाईन तुम्हें खा जाएगी। राजकुमार सोचने लगे कि यह महात्मा पागल तो नहीं हो गया है? हमारे पास तो अस्त्र–शस्त्र हैं जरा देखें तो डाईन कहां हैं? जब वहां गए तो देखा कि वृक्ष के नीचे अशर्फियां और हीरे जवाहारात पड़े हुए थे। उन्होंने कहा कि यह महात्मा सही

में पागल है। महात्मा दूर बैठे इन्तज़ार कर रहे थे कि अब ये चारों बच्चे मरेंगे, वो खा जाएगी चारों को। अब उन चारों राजकुमारों ने देखा कि इतना माल यहाँ पड़ा है, अपन इसे लेकर चलते हैं। आए तो थे वन में शिकार खेलने। महात्मा थोड़ी दूर बैठ गए और देख रहे थे कि अब चारों मरेंगे। इसके लिए उन चारों भाईयों ने आपस में सलाह की और कहा कि दो तो चले जाओ बाजार और कुछ खाने–पीने का सामान ले आओ। हम दो भाई यहा आराम से बैठे हुए इसकी रखवाली करेंगे। फिर तुम दोनों जब वापस आ जाओगे ते खा–पी करके सारा धन घोड़ों पर लाद कर चल पड़ेंगे। दो भाई तो बाजार चले गए और दो भाई रह गए रखवाली में। जो रखवाली में रह गए थे वे आपस में विचार करने लगे कि क्यों भाई ! ये सारा धन चार भागों में बँटेगा। दूसरा कहता है, हाँ। उसने पूछा कि तुम्हारी क्या राय है? वो कहता है कि भाई तुम ही समझलो कि मेरी क्या राय हो सकती है? वो कहता है कि फिर ऐसा कर– वो दोनों जब बाजार से माल लेकर आयेंगे तो उनके यहाँ पहुंचते ही हम उन्हें बाण मार देंगे इसलिए धनुष पर बाण चढ़ाकर बैठ जाते हैं। वो दोनों तो वहीं खतम हो जाएंगे। हम

जा करके राजमहल में पिता जी से कह देंगे कि उनको शेर खा गया या कह देंगे कि वो गुम हो गए और सारा धन हम दोनों आपस में बांट लेंगे।

यह तो इधर दो भाई आपस में बात कर रहे हैं और उधर दूसरे दो जो बाजार से मिठाई लेने गए थे, उन्होंने क्या सोचा? एक ने कहा दूसरे से कि भाई ! क्या राय है? वो धन तो वहां पर पड़ा है। अपन बाजार से माल लायेंगे फिर उनको खिलायेंगे और सारा धन चार भागों में बंटेगा। उसने कहा कि फिर तुम्हारी क्या राय है? कहा कि अपन तो चल करके खाएंगे और जो लड्डू उनके लिए लेंगे उनमें एक–एक पुड़िया विष डाल देंगे। तो दोनों जब खा करके वहां खत्म हो जाएंगे तो सारा माल हम लेकर चल देंगे। राजमहल में बता देंगे कि शिकार करते समय शेर दोनों को खा गया। जैसे वे दोनों इनको मारने का विचार कर रहे थे वैसे ही वहां दोनों भी उनको मारने की योजना बना रहे थे। परिणाम क्या हुआ जानते हो? उधर से वो दोनों खा–पी कर लड्डू में विष डाल करके ले आए। इधर जो दो थे, वे ताक में बैठे थे कि कब ये दोनों बाजार से आयें और उन पर बाण चलाएं। जब दोनों वहाँ पहुचे तो उन्होंने बाण

चला दिए और वे वहीं पर खत्म हो गए और ये दोनों बाजार से लाया गया माल जब खा गए तो वे भी वहीं पर गिरे और राम नाम सत् हो गया। चारों के चारों मर गए और महात्मा चिल्लाते रह गए कि देखो डायन खा गई, डायन खा गई इनको। वह धन किसी के काम नहीं आया।

मेरे कहने का अभिप्राय कि दुनिया में जितना संघर्ष होता है वह उस वस्तु के लिए होता है जिसकी कोई कीमत नहीं है। न तुम्हारे जीवन से उसका सम्बन्ध है, न तुम्हारे जगत से उसका सम्बन्ध है। इसको मोह कहते हैं–

**सोई सेमर सोई सुआ सेवत सदा बसन्त।**
**तुलसी महिमा मोह की सुनत सराहत सन्त।।**

मैं आप लोगों को यह बताना चाहता था कि जीवन का अन्तिम लक्ष्य भगवत्प्राप्ति है। भगवत्प्राप्ति के लिए पहले तुम मनुष्य बनो, मननशील बनो इसलिए कोई काम करने से पहले सोचो कि क्या यह कार्य हमारे आत्मात्थान में हेतु है कि नहीं। जो तुम्हारे आत्मोत्थान में हेतु है वही मूल्यवान् है,याद रखें।

**हरि ॐ तत्सत्**

दिव्यालोक प्रकाशन
ब्रह्मर्षि आश्रम, विराट् नगर, पिंजौर (हरियाणा)
फोन : 01733-266170